Gyanvividha, Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025 : PP-317-325

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-2.25
Vol.-2; Issue-3 (July-Sept.) 2025
Page No.- 317-325
©2025 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Dr. Bablu Kumar Jayswal
Department of History,
School Lecturer,
Upgraded Higher Secondary School,
Nawada, Saran (Bihar).

Corresponding Author :

Dr. Bablu Kumar Jayswal
Department of History,
School Lecturer,
Upgraded Higher Secondary School,
Nawada, Saran (Bihar).

भारतीय राष्ट्रवाद के उदय में प्रेस और साहित्य की भूमिका

सारांश : भारतीय राष्ट्रवाद का उदय केवल राजनीतिक आंदोलनों या नेताओं के प्रयासों का परिणाम नहीं था, बल्कि यह एक व्यापक सामाजिक, सांस्कृतिक और वैचारिक प्रक्रिया थी। इस प्रक्रिया में प्रेस और साहित्य ने आधारभूत भूमिका निभाई। समाचार-पत्रों और पत्रिकाओं ने न केवल औपनिवेशिक शासन की नीतियों की आलोचना की, बल्कि उन्होंने विभिन्न प्रांतों के लोगों को एक साझा राष्ट्रीय चेतना से जोड़ा। इसी तरह, साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से जनता के मन में स्वतंत्रता और आत्मगौरव की भावना जगाई। वंदे मातरम् जैसे गीत और उपन्यासों में निहित राष्ट्रवादी संदेश ने जनता को भावनात्मक रूप से संगठित किया। यह शोधपत्र इस बात का विश्लेषण करता है कि कैसे प्रेस और साहित्य ने भारतीय राष्ट्रवाद की वैचारिक नींव रखी, उसे जनांदोलन का स्वरुप दिया और स्वतंत्रता संग्राम को एक अखिल भारतीय आंदोलन बनाने में सहायक सिद्ध हुए।

मुख्य शब्द : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम, राष्ट्रवाद, प्रेस, साहित्य, पत्रकारिता, सामाजिक सुधार, सांस्कृतिक चेतना एवं जनजागरण।

प्रस्तावना : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम केवल राजनीतिक संघर्ष का परिणाम नहीं था, बल्कि यह एक गहन वैचारिक और सांस्कृतिक आंदोलन भी था। 19वीं शताब्दी में जब भारत औपनिवेशिक शासन की कठोर नीतियों का सामना कर रहा था, तब प्रेस और साहित्य ने राष्ट्रवादी चेतना को संगठित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। प्रेस ने जहाँ अंग्रेज़ों की नीतियों की आलोचना कर जनता को जागरूक किया, वहीं साहित्य ने सांस्कृतिक गौरव और स्वतंत्रता की भावना को स्वर दिया।

पृष्ठभूमि : औपनिवेशिक भारत में प्रेस का उदय 18वीं शताब्दी के अंत में हुआ। "हिकीज बंगाल गजट" (1780) को भारतीय उपमहाद्वीप का पहला समाचार-पत्र माना जाता है, जिसने अंग्रेज़ी सत्ता की आलोचना का

साहस दिखाया (Natarajan, 1955)। आगे चलकर लोकमान्य तिलक के "केसरी" और महात्मा गांधी के "यंग इंडिया" जैसे समाचार-पत्र राष्ट्रीय आंदोलन के वैचारिक मंच बने (Guha, 2007)।

साहित्यिक स्तर पर बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के "आनंदमठ" (1882) और उसमें निहित "वंदे मातरम्" गीत ने राष्ट्रवाद को सांस्कृतिक और भावनात्मक आधार प्रदान किया (Sarkar, 1973)। हिंदी साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चंद्र, प्रेमचंद और मैथिलीशरण गुप्त ने सामाजिक यथार्थ और राष्ट्रीय चेतना को उकेरा। इन रचनाओं ने न केवल शिक्षित वर्ग बल्कि व्यापक जनसमुदाय को भी प्रभावित किया।

शोध का उद्देश्य : इस शोधपत्र का उद्देश्य यह समझना है कि –

1. भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में प्रेस और साहित्य ने किस प्रकार योगदान दिया।
2. प्रेस ने औपनिवेशिक नीतियों के विरुद्ध जनमत निर्माण में क्या भूमिका निभाई।
3. साहित्य ने सांस्कृतिक एकता और राष्ट्रीय पहचान को किस प्रकार सुदृढ़ किया।

शोध का महत्व : प्रेस और साहित्य के योगदान को समझना इसलिए आवश्यक है क्योंकि स्वतंत्रता आंदोलन केवल राजनीतिक संगठन और आंदोलनों का परिणाम नहीं था, बल्कि वैचारिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना का भी उत्पाद था। यह अध्ययन भारतीय राष्ट्रवाद की बहुआयामी प्रकृति को रेखांकित करता है और यह दिखाता है कि किस प्रकार जनमानस को वैचारिक रूप से तैयार किए बिना स्वतंत्रता आंदोलन व्यापक रूप से सफल नहीं हो सकता था।

प्रेस की भूमिका : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में प्रेस की भूमिका को केवल सूचना प्रसार तक सीमित नहीं किया जा सकता। यह प्रेस ही था जिसने भारत जैसे विशाल और विविधताओं से भरे देश में लोगों को एक साझा राष्ट्रीय चेतना से जोड़ा। उस समय प्रेस आधुनिक "मीडिया उद्योग" जैसा संगठित तंत्र नहीं था, बल्कि अधिकतर छोटे संसाधनों, स्वयंसेवी लेखकों और प्रतिबद्ध संपादकों के प्रयासों से चल रहा था। फिर भी इसका प्रभाव इतना गहरा था कि ब्रिटिश सरकार को कई बार इससे डर महसूस हुआ।

राष्ट्रीय चेतना का दीपक : भारतीय प्रेस को यदि उस दौर का "जागृति का दीपक" कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी (Sarkar, 1983, p. 172)। 1780 में जेम्स ऑगस्टस हिकी द्वारा प्रकाशित बंगाल गजट ने प्रेस की परंपरा शुरु की। इसके बाद समाचार दर्पण (1818), अमृत बाजार पत्रिका (1868) और द हिंदू जैसे पत्रों ने समाज में राजनीतिक और सामाजिक प्रश्नों पर चर्चा की शुरुआत की। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक का केसरी और मराठा तो इस परंपरा में मील का पत्थर साबित हुए। उनके संपादकीय केवल लेख नहीं थे, बल्कि जनता की भावनाओं की प्रतिध्वनि थे। तिलक ने निर्भीकता से अंग्रेज़ों की आलो चना की और स्पष्ट कहा कि "स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और मैं इसे लेकर रहूँगा" (Chandra et al., 2000, p. 163)। यह विचार सबसे पहले प्रेस के माध्यम से ही जनमानस तक पहुँचा।

औपनिवेशिक सत्ता से टकराव : ब्रिटिश हुकूमत प्रेस की ताक़त को भली-भाँति समझती थी। यही कारण था कि उसने बार-बार प्रेस की स्वतंत्रता को दबाने की कोशिश की। 1878 का वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट इस बात का उदाहरण है कि अंग्रेज़ सरकार भारतीय भाषाओं में निकलने वाले समाचार-पत्रों से कितनी भयभीत थी। इस कानून के अंतर्गत छोटे-से लेख पर भी मुकदमे चलाए जा सकते थे और प्रेस बंद कर दिए जाते थे। लेकिन इस दमन ने भारतीय प्रेस को और अधिक मुखर बना दिया। इतिहासकारों के अनुसार "प्रेस पर जितना अंकुश लगाया गया, राष्ट्रवादी आवाज़ उतनी ही तेज़ हुई" (Bipan, 1989, p. 119)। पत्रकारों ने जेल जाना स्वीकार किया, परंतु कलम से समझौता नहीं किया।

जनता और नेताओं के बीच सेतु : प्रेस ने केवल समाचार नहीं दिए, बल्कि यह नेताओं और जनता के बीच विचारों का सेतु बना। महात्मा गांधी के यंग इंडिया और हरिजन इसी का उदाहरण हैं। गांधी ने

अपने लेखों में जटिल राजनीतिक विचारों को सरल भाषा में प्रस्तुत किया। अहिंसा, सत्याग्रह, बहिष्कार—ये सभी अवधारणाएँ प्रेस के माध्यम से घर-घर पहुँचीं। गांधी का कहना था कि "प्रेस जनता की आवाज़ है, और जनता की सेवा ही इसका धर्म है" (Gandhi, 1927, p. 60)। नेहरु, लाजपत राय और गोपाल कृष्ण गोखले जैसे नेताओं ने भी प्रेस का भरपूर उपयोग किया। इंडियन ओपिनियन (दक्षिण अफ्रीका में गांधी द्वारा शुरु किया गया) ने प्रवासी भारतीयों को संगठित किया और बाद में यही परंपरा भारत लौटकर व्यापक स्वतंत्रता आंदोलन का हिस्सा बनी।

विविधता में एकता : भारत की भाषाई और सांस्कृतिक विविधता इतनी व्यापक थी कि उसे जोड़ना आसान नहीं था। लेकिन प्रेस ने इस कार्य को सम्भव बनाया। उदाहरण के लिए, जब अमृत बाजार पत्रिका अंग्रेज़ी से हिंदी में परिवर्तित हुई, तो उसने अंग्रेज़ों को यह स्पष्ट संदेश दिया कि भारतीय भाषाएँ भी राष्ट्रवाद की धारा को गति देंगी। महाराष्ट्र, बंगाल, उत्तर प्रदेश, पंजाब और मद्रास—हर क्षेत्र का अपना-अपना प्रेस था, लेकिन संदेश एक ही था: "स्वतंत्रता" (Guha, 2007, p. 49)।

आंदोलन का प्रेरक : इतिहासकारों का मानना है कि यदि प्रेस न होता तो 1905 का स्वदेशी आंदोलन इतना व्यापक रुप से न फैल पाता। प्रेस ने विदेशी वस्त्रों की होली जलाने और स्वदेशी के समर्थन में प्रचार-प्रसार किया। इसी प्रकार 1920 के असहयोग आंदोलन और 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन में भी प्रेस ने निर्णायक भूमिका निभाई। एक समकालीन विचारक के अनुसार, "प्रेस स्वतंत्रता संग्राम का मौन सेनानी था, जिसने शब्दों से आंदोलन की ज्वाला प्रज्वलित की" (Brown, 1994, p. 209)।

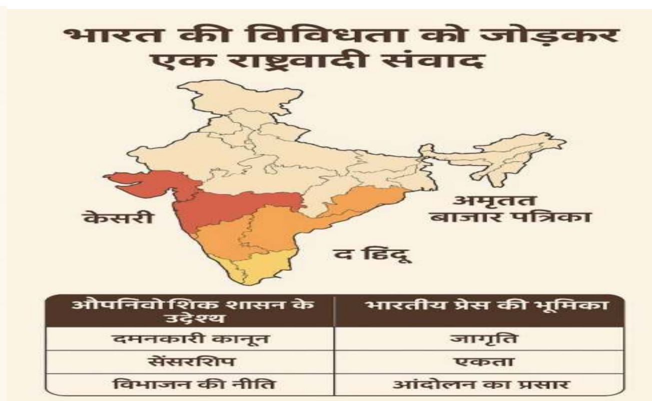

1. टाइमलाइन इन्फोग्राफिक की व्याख्या

यह टाइमलाइन भारतीय राष्ट्रवाद के विकास में प्रेस की केंद्रीय भूमिका को रेखांकित करती है। इसमें पाँच प्रमुख ऐतिहासिक घटनाओं का चयन किया गया है, जो प्रेस और राष्ट्रवादी चेतना के आपसी संबंध को दर्शाती हैं।

- 1780 – बंगाल गजट: भारत का प्रथम समाचार पत्र, जिसने औपनिवेशिक काल में पत्रकारिता की नींव रखी।
- 1878 – वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट: औपनिवेशिक शासन द्वारा भारतीय भाषाई प्रेस को नियंत्रित करने का प्रयास।
- 1881 – केसरी (लोकमान्य तिलक द्वारा): राष्ट्रवादी विचारों के प्रसार हेतु एक महत्वपूर्ण मंच।
- 1905 – स्वदेशी आंदोलन और प्रेस: बंग-भंग विरोधी आंदोलन में प्रेस ने आंदोलन की रणनीति और विचारधारा को व्यापक बनाया।
- 1920–42 – गांधी के पत्र (यंग इंडिया, हरिजन): सत्याग्रह, स्वराज्य और अहिंसा जैसे सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार का प्रमुख साधन।

यह इन्फोग्राफिक इस तथ्य को स्थापित करता है कि प्रेस केवल समाचार का माध्यम नहीं रहा, बल्कि उसने राष्ट्रवादी विमर्श को निरंतर गति प्रदान की।

2. भारत का नक्शा और तुलनात्मक चार्ट की व्याख्या

(A) भारत का नक्शा : भारत के मानचित्र में विभिन्न क्षेत्रों के प्रमुख समाचार पत्रों को दर्शाया गया है, जैसे महाराष्ट्र में केसरी, बंगाल में अमृत बाजार पत्रिका और मद्रास में द हिंदू। यह मानचित्र इस तथ्य को रेखांकित करता है कि भारतीय प्रेस ने भौगोलिक और भाषाई विविधताओं को पार करते हुए एक अखिल भारतीय राष्ट्रवादी संवाद का निर्माण किया।

(B) तुलनात्मक चार्ट : तुलनात्मक चार्ट औपनिवेशिक शासन और भारतीय प्रेस के बीच वैचारिक संघर्ष को स्पष्ट करता है।

- औपनिवेशिक शासन के उद्देश्य में दमनकारी कानूनों का निर्माण, प्रेस पर सेंसरशिप और समाज में विभाजन की नीति शामिल रही।
- इसके विपरीत, भारतीय प्रेस की भूमिका समाज में जागृति फैलाने, राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने और स्वतंत्रता आंदोलन को व्यापक बनाने में रही।

इस तुलनात्मक विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि औपनिवेशिक सत्ता द्वारा उत्पन्न दमनकारी संरचनाओं के बावजूद भारतीय प्रेस ने प्रतिरोध का स्वरूप धारण किया और स्वतंत्रता आंदोलन को वैचारिक आधार प्रदान किया।

साहित्य की भूमिका : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम केवल राजनीतिक रैलियों, आंदोलनों या नेताओं के भाषणों तक सीमित नहीं था। यह आंदोलन दिल और दिमाग दोनों को छूने वाला था। जहाँ प्रेस ने तथ्यों और विचारों को जन-जन तक पहुँचाया, वहीं साहित्य ने उस आंदोलन को भावनात्मक और सांस्कृतिक गहराई दी। साहित्य ने जनता को यह एहसास कराया कि स्वतंत्रता केवल राजनीतिक अधिकार नहीं है, बल्कि यह हमारी आत्मा की पुकार है।

राष्ट्रवादी चेतना का सांस्कृतिक आधार : 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में जब भारत में राष्ट्रवाद की पहली लहर उठी, तब साहित्य ने उसे आकार दिया। बंकिम-चंद्र चट्टोपाध्याय का उपन्यास आनंदमठ (1882) केवल एक कहानी नहीं था, बल्कि इसमें निहित 'वंदे मातरम्' गीत भारत के हर कोने में गूँज उठा। यह गीत धीरे-धीरे स्वतंत्रता आंदोलन का नारा बन गया। लोग इसे गाते समय केवल गीत नहीं गा रहे थे, बल्कि अपने दिल में स्वतंत्र भारत का सपना देख रहे थे।

रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताएँ और गीत इस आंदोलन के सांस्कृतिक पक्ष का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनका गीत जन गण मन आगे चलकर राष्ट्रीय गान बना, लेकिन उससे पहले ही उनकी रचनाओं ने भारत को आत्मगौरव और आध्यात्मिक शक्ति से भर दिया। ठाकुर ने स्पष्ट कहा था कि "भारत की आत्मा उसकी संस्कृति में बसती है" (Tagore, 1917, p. 44)। यह संस्कृति ही साहित्य के माध्यम से राष्ट्रवाद को पोषण देती रही।

सामाजिक सुधार और जागृति : हिंदी साहित्य में भारतेन्दु हरिश्चंद्र को "आधुनिक हिंदी साहित्य का जनक" कहा जाता है (Dwivedi, 1966, p. 112)। उन्होंने अपने नाटकों और कविताओं में समाज की दुर्दशा, गुलामी और सुधार की आवश्यकता को सामने रखा। भारत दुर्दशा जैसे नाटक ने लोगों के दिलों को झकझोर दिया।

प्रेमचंद का साहित्य स्वतंत्रता आंदोलन की सामाजिक आत्मा कहा जा सकता है। सेवासदन, रंगभूमि और गोदान जैसी कृतियाँ केवल सामाजिक शोषण की कहानियाँ नहीं थीं, बल्कि इनमें स्वतंत्रता, समानता और न्याय की आकांक्षा झलकती थी। प्रेमचंद ने किसान, मज़दूर और स्त्रियों की पीड़ा को सामने रखकर यह दिखाया कि स्वतंत्रता केवल अभिजात वर्ग का मुद्दा नहीं है, बल्कि यह आम जनता की ज़िंदगी का सवाल है।

मैथिलीशरण गुप्त की कविता भारत-भारती ने हिंदी भाषी समाज में राष्ट्रवाद की गहरी जड़ें डालीं। यह कविता आज़ादी के गीतों की तरह जनमानस में रच-बस गई।

सांस्कृतिक एकता और ऐतिहासिक गौरव : भारत विविधता से भरा हुआ है—भाषाओं, धर्मों और संस्कृतियों की रंग-बिरंगी दुनिया। साहित्य ने इस विविधता को जोड़कर एक साझा पहचान दी। उर्दू

शायर हसरत मोहानी का नारा "इंकलाब जिंदाबाद" (Hasrat, 1921, p. 5) और उनकी ग़ज़लें आंदोलन का हिस्सा बनीं। अली सरदार जाफ़री जैसे कवियों ने भी क्रांति की आग को शब्द दिए। बंगाली, मराठी, तमिल और पंजाबी साहित्य ने भी अपनी-अपनी भाषाओं में स्वतंत्रता का संदेश फैलाया।

इतिहास और संस्कृति पर आधारित साहित्य ने यह एहसास कराया कि भारत का अतीत गौरवशाली रहा है और अब गुलामी से मुक्ति पाना ही उसका भविष्य है। इस ऐतिहासिक चेतना ने जनता को आत्मगौरव से भर दिया और अंग्रेज़ी हुकूमत की श्रेष्ठता की धारणाको तोड़ा।

विश्व मंच पर भारत की आवाज़ : भारतीय साहित्य ने केवल भारत के भीतर ही नहीं, बल्कि विदेशों में भी राष्ट्रवाद की छवि को मज़बूत किया। रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि को 1913 में नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ। उनकी रचनाओं ने यूरोप और अमेरिका में यह संदेश फैलाया कि भारत केवल एक गुलाम देश नहीं है, बल्कि उसकी अपनी संस्कृति, दर्शन और स्वतंत्रता की आकांक्षा है। इसने स्वतंत्रता आंदोलन को अंतरराष्ट्रीय वैधता प्रदान की।

साहित्य और राष्ट्रवाद का तालिका (Literature and Nationalism)

लेखक/कवि	प्रमुख कृति / नारा	योगदान / प्रभाव
बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय	आनंदमठ / 'वंदे मातरम्'	राष्ट्रवादी गीत, आंदोलन का नारा, जनभावना का जागरण
रवीन्द्रनाथ ठाकुर	गीतांजलि, जन गण मन	सांस्कृतिक आत्मगौरव, विश्व मंच पर भारत की पहचान
प्रेमचंद	गोदान, सेवासदन	किसान-मजदूरों की पीड़ा, सामाजिक न्याय, जनसाहित्य
मैथिलीशरण गुप्त	भारत-भारती	हिंदी भाषी समाज में राष्ट्रवाद की गहरी चेतना
हसरत मोहानी	ग़ज़लें / "इंकलाब जिंदाबाद"	क्रांतिकारी भावना, जनजागरण, आंदोलन की ऊर्जा

उपरोक्त तालिका स्पष्ट करती है कि साहित्य केवल रचनात्मक अभिव्यक्ति का माध्यम नहीं था, बल्कि यह स्वतंत्रता संग्राम का सशक्त वैचारिक और भावनात्मक हथियार भी बना। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का आनंदमठ और 'वंदे मातरम्' ने स्वतंत्रता आंदोलन को सांस्कृतिक आधार प्रदान किया, जबकि रवीन्द्रनाथ ठाकुर की गीतांजलि और जन गण मन ने भारतीय आत्मगौरव को विश्व पटल पर स्थापित किया।

प्रेमचंद की रचनाओं ने किसानों, मजदूरों और आम जनता की व्यथा को स्वर देकर यह दिखाया कि आज़ादी का सवाल केवल राजनीतिक नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय और समानता से भी जुड़ा हुआ है। मैथिलीशरण गुप्त की भारत-भारती ने हिंदी भाषी समाज में राष्ट्रवाद की चेतना को व्यापक बनाया। वहीं हसरत मोहानी का नारा "इंकलाब ज़िंदाबाद" भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की क्रांतिकारी ऊर्जा का प्रतीक बन गया।

इस प्रकार तालिका यह दर्शाती है कि साहित्य ने राष्ट्रवाद को केवल विचारों के स्तर पर ही नहीं, बल्कि भावनात्मक, सामाजिक और सांस्कृतिक स्तर पर भी गहराई प्रदान की।

प्रेस और साहित्य का परस्पर संबंध : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में प्रेस और साहित्य को अलग-अलग इकाइयों की तरह नहीं देखा जा सकता। दोनों एक-दूसरे के पूरक थे। यदि प्रेस विचारों का मंच था तो साहित्य उन विचारों का भावनात्मक रूप। प्रेस ने साहित्य को जनता तक पहुँचाया और साहित्य ने प्रेस को संवेदनशीलता और सांस्कृतिक गहराई दी। इन दोनों के संगम ने ही राष्ट्रवाद को जनांदोलन का स्वरूप दिया।

साहित्य का प्रसार माध्यम बना प्रेस : उस दौर में किताबें और उपन्यास आम जनता तक इतनी आसानी से नहीं पहुँचते थे। पढ़ने-लिखने की सुविधा सीमित थी और प्रकाशन तंत्र भी विकसित नहीं हुआ था। ऐसे

में समाचार-पत्र और पत्रिकाएँ ही साहित्य का प्रमुख माध्यम बने। बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय के निबंध हों या भारतेन्दु हरिश्चंद्र की कविताएँ, वे पहले पत्र-पत्रिकाओं में छपकर ही लोगों तक पहुँचीं। प्रेस ने साहित्यकारों की रचनाओं को केवल उच्च वर्ग तक सीमित नहीं रहने दिया, बल्कि उन्हें गाँव-कस्बों तक फैलाया।

पत्रकारिता में साहित्यिक रंग : भारतीय प्रेस केवल सूखी खबरों तक सीमित नहीं था। उसमें साहित्यिक भाषा और शिल्प का भी प्रयोग होता था। लोकमान्य तिलक के केसरी के लेखों में साहित्यिक व्यंग्य, तीखे रूपक और सांस्कृतिक प्रतीक दिखाई देते हैं। इस शैली ने लेखन को अधिक प्रभावी और प्रेरक बना दिया। प्रेस के लेख केवल तर्क नहीं थे, बल्कि उनमें साहित्य की भावनात्मक ताक़त भी शामिल थी।

साहित्यकार बने पत्रकार : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में कई ऐसे उदाहरण हैं जब साहित्यकार स्वयं पत्रकार बन गए। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिंदी पत्रकारिता को नया आयाम दिया। महादेव गोविंद रानाडे, बाल गंगाधर तिलक, यहाँ तक कि प्रेमचंद ने भी समय-समय पर पत्र-पत्रिकाओं में सक्रिय भागीदारी की। यह दर्शाता है कि साहित्य और पत्रकारिता के बीच कोई कठोर दीवार नहीं थी। दोनों आपस में घुल-मिलकर राष्ट्रवादी चेतना को मज़बूत कर रहे थे।

जनता और नेतृत्व के बीच संवाद : प्रेस और साहित्य मिलकर नेताओं और जनता के बीच संवाद का सेतु बने। गांधी जी के विचार यंग इंडिया में छपते थे, वहीं जनता की भावनाओं को प्रेमचंद जैसे साहित्यकार अपनी कहानियों और उपन्यासों में अभिव्यक्त करते थे। इस तरह एक तरफ़ विचार और नीति, तो दूसरी तरफ़ संवेदना और संस्कृति—दोनों का समन्वय हुआ। यही कारण था कि स्वतंत्रता आंदोलन केवल "राजनीतिक संघर्ष" नहीं रहा, बल्कि यह सांस्कृतिक पुनर्जागरण भी बन गया।

संघर्ष और साझेदारी : ब्रिटिश सरकार को अच्छी तरह पता था कि प्रेस और साहित्य मिलकर जनता को जागरूक कर रहे हैं। यही कारण था कि एक ओर समाचार-पत्रों पर मुकदमे हुए, तो दूसरी ओर साहित्यकारों की रचनाओं पर सेंसर लगाया गया। लेकिन इस दमन ने दोनों को और निकट ला दिया। साहित्य ने जहाँ प्रेस को प्रेरणा दी, वहीं प्रेस ने साहित्य को जीवन्तता और प्रसार दिया।

साहित्यकार–पत्रकार तालिका

साहित्यकार	साहित्यिक योगदान	पत्रकारिता योगदान
भारतेन्दु हरिश्चंद्र	भारत दुर्दशा, नाटक, कविताएँ – सामाजिक जागृति	कवि वचन सुधा, हरिश्चंद्र चंद्रिका के संपादन द्वारा हिंदी पत्रकारिता को नया आयाम दिया
बाल गंगाधर तिलक	राष्ट्रवादी लेखन, राजनीतिक निबंध	केसरी (मराठी), मराठा (अंग्रेज़ी) – निर्भीक राजनीतिक पत्रकारिता
महात्मा गांधी	लेख, आत्मकथाएँ, सत्याग्रह और अहिंसा पर लेखन	यंग इंडिया, हरिजन, इंडियन ओपिनियन के माध्यम से आंदोलन का प्रचार
मुंशी प्रेमचंद	गोदान, सेवासदन, रंगभूमि – किसान और आमजन की पीड़ा	जागरण और अन्य पत्रिकाओं में लेखन; साहित्यिक पत्रकारिता की परंपरा
रवीन्द्रनाथ ठाकुर	गीतांजलि, कविताएँ, गीत – सांस्कृतिक राष्ट्रवाद	मुकुट, विश्वभारती पत्रिका के माध्यम से विचारों का प्रसार
हसरत मोहानी	ग़ज़लें, क्रांतिकारी कविता – "इंकलाब ज़िंदाबाद"	उर्दू-ए-मुअल्ला का संपादन, जिसमें स्वतंत्रता के लिए खुलकर लेखन
लाला लाजपत राय	निबंध, लेख – राष्ट्रीय एकता और शिक्षा पर जोर	पंजाब केसरी के माध्यम से आंदोलन का प्रचार-प्रसार

उपरोक्त तालिका यह स्पष्ट करती है कि भारतीय साहित्यकारों ने केवल साहित्यिक सृजन तक स्वयं को सीमित नहीं रखा, बल्कि पत्रकारिता को भी स्वतंत्रता संग्राम का सक्रिय साधन बनाया। भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिंदी पत्रकारिता को आधुनिक स्वरूप दिया, वहीं तिलक ने केसरी और मराठा के माध्यम से

ब्रिटिश शासन की तीखी आलोचना कर जनता में स्वराज्य की चेतना जगाई। गांधी ने अपने पत्रों यंग इंडिया, हरिजन और इंडियन ओपिनियन के द्वारा सत्याग्रह और अहिंसा की अवधारणा को सरल भाषा में आमजन तक पहुँचाया।

इसी प्रकार, प्रेमचंद ने उपन्यासों और कहानियों के साथ-साथ पत्र-पत्रिकाओं में लेखन कर जनता की सामाजिक-आर्थिक व्यथा को उजागर किया। ठाकुर और हसरत मोहानी ने अपने साहित्य और पत्रकारिता दोनों से सांस्कृतिक आत्मगौरव और क्रांतिकारी भावना को प्रोत्साहित किया। लाला लाजपत राय ने पंजाब केसरी के द्वारा आंदोलन को जनमानस से जोड़ा।

इस प्रकार, साहित्यकार- पत्रकार की यह दोहरी भूमिका स्वतंत्रता आंदोलन की वैचारिक और भावनात्मक ऊर्जा का महत्वपूर्ण आधार बनी।

चुनौतियाँ :

भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान प्रेस और साहित्य ने जितना बड़ा योगदान दिया, उतनी ही बड़ी चुनौतियों का भी सामना किया। यह संघर्ष केवल विचारों का नहीं था, बल्कि अस्तित्व का भी था। औपनिवेशिक शासन समझ चुका था कि अगर जनता के मन में स्वतंत्रता की चिंगारी जल रही है, तो उसकी सबसे बड़ी वजह यही प्रेस और साहित्य हैं। इसलिए इन दोनों पर सबसे अधिक प्रहार भी हुए।

1. औपनिवेशिक सेंसरशिप और दमनकारी क़ानून : ब्रिटिश सरकार ने बार-बार प्रेस की स्वतंत्रता को कुचलने की कोशिश की। वर्नाक्युलर प्रेस एक्ट (1878) इसका सबसे बड़ा उदाहरण है। इस कानून का उद्देश्य भारतीय भाषाओं के अख़बारों को दबाना था, क्योंकि वे सीधे जनता से संवाद करते थे। छोटे समाचार-पत्रों को जरा-सी आलोचना पर बंद कर दिया जाता, संपादकों को जेल में डाल दिया जाता। साहित्यकारों की किताबें छापने से पहले सेंसर की जातीं, और कई बार उन्हें जब्त कर लिया जाता। इस माहौल में स्वतंत्र रूप से लिखना किसी साहसिक कार्य से कम नहीं था।

2. आर्थिक कठिनाइयाँ : अधिकांश समाचार-पत्र और पत्रिकाएँ सीमित संसाधनों पर चल रही थीं। विज्ञापन नहीं मिलते थे, पाठक गरीब जनता थी जो अख़बार ख़रीदने की स्थिति में नहीं थी। नतीजा यह हुआ कि कई समाचार-पत्र लंबे समय तक टिक नहीं पाए। साहित्यकार भी अक्सर आर्थिक तंगी में जीते थे। प्रेमचंद जैसे लेखक को अपने परिवार का पालन-पोषण करने के लिए सरकारी नौकरी करनी पड़ी, लेकिन उनके लेखन की कीमत यह थी कि अक्सर उन्हें नौकरी छोड़नी पड़ती थी।

3. मुकदमे और कारावास :

संपादकों और साहित्यकारों को केवल लेखन की वजह से जेल जाना पड़ता था। लोकमान्य तिलक (1908, 1916): तिलक को केसरी में लिखे गए लेखों के लिए राजद्रोह के आरोप में गिरफ्तार किया गया और उन्हें मंडाले (बर्मा) की जेल में भेजा गया। यह दर्शाता है कि औपनिवेशिक सरकार भारतीय प्रेस की आवाज़ को कितना खतरनाक मानती थी।

महात्मा गांधी (1922): यंग इंडिया में लिखे

गए लेखों के आधार पर गांधी पर राजद्रोह का मुकदमा चलाया गया। अदालत में गांधी ने स्वयं स्वीकार किया कि उन्होंने सत्य और अहिंसा के सिद्धांतों को जनता तक पहुँचाया है, जिसके लिए वे सज़ा भोगने को तैयार हैं।

सुभाष चंद्र बोस (1930 के दशक**)**: बोस ने बंगाल के अख़बारों में राष्ट्रवादी विचारों को प्रकट किया, जिसके कारण उन पर कई बार मुकदमे दर्ज हुए और उन्हें जेल भेजा गया।

अन्य नेता: लाला लाजपत राय, जवाहरलाल नेहरु और गणेश शंकर विद्यार्थी जैसे पत्रकारों को भी अपने लेखों के लिए मुकदमों और कारावास का सामना करना पड़ा। यह एक ऐसा दौर था जब कलम उठाना तलवार उठाने जितना ख़तरनाक था।

4. सामाजिक और भाषाई विविधता : भारत की सबसे बड़ी शक्ति उसकी विविधता है, लेकिन उस समय यह एक चुनौती भी थी। अलग-अलग भाषाओं में छपने वाले अख़बार और साहित्य हमेशा हर हिस्से तक नहीं पहुँच पाते थे। उत्तर भारत में जो अख़बार प्रसिद्ध थे, वे दक्षिण तक पहुँचने में कठिनाई झेलते। फिर भी प्रेस और साहित्य ने इस विविधता को चुनौती मानने की बजाय अवसर बनाया और धीरे-धीरे भाषाई सीमाओं को पार किया।

5. ब्रिटिश दमन के बावजूद जनता की पहुँच : कई बार अख़बार जब्त कर लिए जाते थे या साहित्यिक किताबें जलवा दी जाती थीं। तब लोग गुप्त रूप से उन्हें पढ़ते और आगे बढ़ाते। कई जगह एक अख़बार पूरा गाँव मिलकर पढ़ता था। इस स्थिति ने यह दिखाया कि चुनौतियाँ कितनी भी हों, जनता का लगाव प्रेस और साहित्य से कम नहीं हुआ।

निष्कर्ष : भारतीय स्वतंत्रता संग्राम का इतिहास केवल रणभूमि और राजनीतिक वार्ताओं का इतिहास नहीं है, बल्कि यह कलम और काग़ज़ का भी इतिहास है। जिस समय तलवारें और बंदूकें जनता तक नहीं पहुँच पाती थीं, उस समय अख़बारों के पन्ने और साहित्य की पंक्तियाँ हर घर में, हर दिल में स्वतंत्रता की लौ जलाने का काम कर रही थीं।

प्रेस ने जनता को सच्चाई बताने, औपनिवेशिक शासन की चालों को उजागर करने और अलग-अलग हिस्सों के लोगों को एक साझा विचारधारा से जोड़ने का कार्य किया। वहीं साहित्य ने इन विचारों को संवेदनशील भाषा दी कविता में करुणा, उपन्यास में साहस और गीतों में आत्मगौरव। यही कारण है कि वंदे मातरम् जैसे गीत आंदोलन की आत्मा बन गए और यंग इंडिया जैसे अख़बार आंदोलन की आवाज़।

यदि उस दौर में प्रेस और साहित्य का योगदान न होता, तो संभव है कि भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन केवल कुछ नेताओं और शहरों तक सीमित रह जाता। लेकिन प्रेस और साहित्य ने उसे जन-जन का आंदोलन बना दिया। वे सिर्फ सहायक उपकरण नहीं थे, बल्कि आंदोलन की आत्मा थे—ऐसी आत्मा जिसने पूरे भारत को एक सूत्र में बाँध दिया।

आज जब हम स्वतंत्र भारत में साँस ले रहे हैं, तो यह स्मरण करना आवश्यक है कि यह स्वतंत्रता केवल वीर सैनिकों की कुर्बानियों से नहीं, बल्कि उन कलमकारों और पत्रकारों की हिम्मत से भी मिली है जिन्होंने सत्य को लिखने और बोलने का साहस दिखाया। इसलिए भारतीय राष्ट्रवाद के उदय में प्रेस और साहित्य का योगदान इतिहास के पन्नों में ही नहीं, बल्कि हमारी सांस्कृतिक स्मृति में भी सदा जीवित रहेगा।

संदर्भ सूची :

1. Amrit Bazar Patrika. (1868). Calcutta: Amrit Patrika Press. p. 7.
2. Brown, J. (1994). The press and nationalism in colonial India (p. 209). Oxford University Press.
3. Chandra, B. (1989). India’s struggle for independence, 1857–1947 (p. 119). Penguin Books.
4. Chandra, B., Mukherjee, M., &

Mukherjee, A. (2000). India's struggle for independence (6th ed., p. 163). Penguin Books.
5. Chattopadhyay, B. (1882). Anandamath. Calcutta: Bangadarshan Press. p. 201.
6. Dwivedi, H. (1966). Bharatendu Yug. Allahabad: Lokbharti Prakashan. p. 112.
7. Gandhi, M. K. (1922). Young India (1919–1922). Ahmedabad: Navajivan Publishing. p. 56.
8. Gandhi, M. K. (1933). Harijan. Ahmedabad: Navajivan Publishing. p. 14.
9. Guha, R. (2007). India after Gandhi: The history of the world's largest democracy (p. 49). HarperCollins.
10. Gupta, M. (1912). Bharat-Bharati. Kanpur: Sudarshan Press. p. 33.
11. Hasrat Mohani. (1921). Kulliyat-e-Hasrat. Lucknow: Hindustani Academy. p. 5.
12. Hasrat, M. (1921). Selected ghazals and revolutionary writings (p. 5).
13. Hickey, J. A. (1780). Bengal Gazette. Calcutta: Hickey's Press. p. 2.
14. Jafri, A. S. (1944). Nai Duniya Ko Salaam. Bombay: People's Publishing. p. 27.
15. Natarajan, J. (1955). History of Indian journalism. Publications Division, Government of India.
16. Nehru, J. (1941). An Autobiography. London: Bodley Head. p. 98.
17. Premchand. (1921). Sevasadan. Calcutta: Indian Press. p. 65.
18. Premchand. (1936). Godaan. Banaras: Saraswati Press. p. 87.
19. Sarkar, S. (1973). Modern India, 1885–1947. Macmillan.
20. Sarkar, S. (1983). India through the ages (p. 172). Orient Longman.
21. Tagore, R. (1917). Nationalism. London: Macmillan. p. 44.
22. Tagore, R. (1917). Selected poems and songs (p. 44). Calcutta: Macmillan.
23. The Hindu. (1878). Madras: The Hindu Press. p. 11.
24. Tilak, B. G. (1906). Kesari (editorials). Pune: Kesari Press. p. 23.

•